HindiTech
A Blind Double Peer Reviewed Bilingual Web-Research Journal

भील जनजाति के लिए भाषा-शिक्षण की रूपरेखा

परमान सिंह

parmansingh@gmail.com

असिस्टेंट प्रोफेसर एवं केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के मैसुरु केंद्र के क्षेत्रीय निदेशक

भारत सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं भाषाई विविधताओं का देश है, जिसमें एक साथ कई जातियों, समुदायों एवं धर्मों के लोग एक साथ निवास करते हैं। भारत की कुल जनसंख्या में जनजातीय लोगों की भी संख्या कुछ कम नहीं है और इन्हीं जनजातीय लोगों में भील जनजाति संख्या की दृष्टि से गोंड और संथाली जनजाति के बाद तीसरी सबसे बड़ी जनजाति है। इस जनजाति के लोग भारत के बड़े हिस्से में फैले हुए हैं, जो प्रमुख रूप से दक्षिणी राजस्थान, गुजरात, पश्चिमी महाराष्ट्र, उत्तर-पश्चिमी मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ एवं दादर तथा नागर हवेली में केंद्रित हैं। भील गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र एवं राजस्थान में एक अनुसूचित जनजाति है। राजस्थान की कुल जनसख्या का 39 प्रतिशत आबादी भील जनजाति की है।विद्वानों के अनुसार भील शब्द की उत्पत्ति द्रविड़ शब्द 'बीलु' से हुई है, जिसका अर्थ है धनुष। धनुष-बाण चूँकि इस जनजाति का शिकार के लिए तथा जंगली जानवरों व अपने विरोधियों से रक्षा हेतु मुख्य शस्त्र था, अतएव ये लोग उसके आधार पर भील कहलाने लगे। प्राचीन संस्कृत साहित्य में भील शब्द लगभग सभी बनवासी जातियों जैसे निषाद, शबर आदि के लिए समानार्थी रूप से प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार भील संज्ञा प्राचीन संस्कृत साहित्य में उस वर्ग विशेष के लिए प्रयुक्त की जाती थी, जो धनुष-बाण के प्रयोग से शिकार करके अपना पेट-पालन करते थे। यह देखा गया है कि परवर्ती साहित्य में भी इस स्थिति को ज्यों का त्यों ही रख लिया गया है। भारत में भीलों से अधिक प्रकृति पर निर्भर रहने वाली, आधुनिक सभ्यता से दूर और शहरी सभ्यता को चकित करने वाली दूसरी जाति नहीं है। भील तो मानो प्रकृति की गोद में ही खेलने और पलने के लिए उत्पन्न हुआ है।

भील जनजाति द्वारा बोली जाने वाली भाषा को भीली कहते हैं। कुछ विद्वानों, जैसे नेमी चंद जैन एवं प्रोफ़ेसर मथुरा प्रसाद अग्रवाल ने भीली भाषा को मुंडा परिवार, जो कि आस्ट्रिक भाषा परिवार की शाखा है, से उत्पन्न माना है और भीली को आस्ट्रिक-भीली के नाम से वर्गीकृत किया है जो बाद में द्रविड़ों के संपर्क में आने से आस्ट्रिक-द्रविड़-भीली हो गई और उसके बाद भील जनजाति जब आर्यों के संपर्क में आई तो यह आस्ट्रिक-द्रविड़-आर्यन-भीली हो गई। हालांकि यह एक बहुत ही गंभीर शोध का विषय है अतः इस लेख में भारत की जनगणना अभिलेख के अनुसार भीली को भारो-आर्य परिवार के केंद्रीय समूह की भाषा माना गया है, को लेकर ही चला गया है। भीली एक भाषा समूह है, क्योंकि इसका एक विस्तृत क्षेत्र होने के साथ-साथ इसकी अनेक बोलियाँ भी हैं। भीली भाषा का राजस्थानी, गुजराती एवं पश्चिमी हिंदी से अंतर्संबंध है। विशाल क्षेत्र होने के कारण इसकी बोलियों में भी पर्याप्त भाषाई भिन्नता है।

भीली भाषा-भाषी, यद्यपि 20 राज्यों और 5 केंद्र शासित राज्यों में फैले हुए हैं लेकिन राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एवं गुजरात में इनकी संख्या काफी अधिक है। 2001 की जनगणना के अनुसार भीली या भिलोड़ी बोलने वालों की संख्या 9,582,957 है, जबकि 1991 और 1981 में इनकी संख्या क्रमशः 5,572,308 तथा 4,293,314 थी। स्पष्ट है कि भीली भाषा बोलने वालों की संख्या में लगातार वृद्धि हुई है। 2001 की जनगणना के अनुसार भीली भाषा के अन्तर्गत 10,000 से अधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली 17 बोलियाँ सूचित की गई हैं जो इस प्रकार हैं-

1. बावरी (27,242)
2. बारेल (637,751)
3. भिलाली (680,689)
4. भील/भीलोड़ी (3,313,481)
5. चौधरी (209,363)
6. ढ़ोडिया (69,290)
7. गामित/गावित (223,697)
8. गरासिया (51,183)

9. कोकना/कोकनी/कुकना (108,385)
10. मावची (99,474)
11. पारधी (49,290)
12. पावरी (154,918)
13. राठी (101,458)
14. तादवी (99,348)
15. वारली (475,433)
16. वसवा (417,85)
17. वागड़ी (2,510,811)
18. अन्य (191,262)

सर्वप्रथम, भील जनजाति की भाषा के लिए भीली शब्द के प्रयोग पर ही भील लोगों को आपत्ति है जिस प्रकार आसाम के लोगों को 'आसामी' कहने पर। उनके अनुसार यह शब्द अपमानजनक है। किसी भी समुदाय, विशेष रूप से जब किसी जनजाति के लोगों से संपर्क किया जाता है तो इन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए की जाने-अनजाने किसी भी ऐसे शब्द का प्रयोग न किया जाय, जो उन्हें अपमानजनक लगे। भील जनजाति की भाषा के लिए भीली शब्द के प्रयोग से समुदाय के लोगों में हीन भावना पनपती है तथा उनके मुख्य धारा से जुड़ने की संभावनाएँ क्षीण होती जाती है। इस संबंध में प्रो. गणेश देवी का मानना है कि भीली शब्द का ऐतिहासिक प्रसंग है, दरअसल इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम एक अँग्रेज अधिकारी ने गाली के रूप में किया था। दूसरा महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि भीली के जिस क्षेत्र की चर्चा यहाँ की जा रही है वह मूलत: वागड़ क्षेत्र के नाम से जाना जाता है अतः इस क्षेत्र की भाषा को वागड़ी कहा जाना ही उचित होगा।

किसी भी भाषा को जब शिक्षा में शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयोग करने की बात होती है तो निम्न पाँच बिंदुओं पर क्रमशःविचार करना आवश्यक हो जाता है-

1. भाषा और लिपि
2. भाषा और क्षेत्रीय विविधता
3. स्कूली शिक्षा में भाषा का प्रयोग
4. स्कूल के बाहर भाषा का प्रयोग
5. भाषा के प्रचार-प्रसार में नेतृत्व

भाषा को शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोग करने की पहली और मूलभूत आवश्यकता भाषा को लिपिबद्ध करने की होती है। लिपि होने पर भी किसी भाषा को सिखाने-सिखाने में सहायक या बाधक बनाने वाले दो ही प्रमुख तत्व होते हैं भाषा का व्याकरण एवं उसकी लिपि। लिपि का एक पक्ष है, सामान्य और विशिष्ट स्वनों के पृथक प्रतीक वर्णों की समृद्धि, उनका परस्पर स्पष्ट आकार-भेद, लिखावट में सरलता तथा स्थान-लाघव एवं प्रयत्न-लाघव। लिपि का दूसरा पक्ष है वर्तनी। एक हि स्वन को प्रकट करने के लिए विविध वर्णों का प्रयोग वर्तनी को जटिल बना देता है और यह लिपि का एक सामान्य दोष माना जाता है। भीली भाषा में वैसे तो लिखित सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है, लेकिन जो भी प्रयास हुए हैं उनमें मुख्यतः दो लिपियों का प्रयोग हुआ है। मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एवं राजस्थान के क्षेत्र में भीली को देवनागरी लिपि में तथा गुजरात में इसको गुजराती लिपि में लिखा गया है ओज लिखा जा भी रहा है, जिसका मुख्य कारण उन राज्यों की राजभाषा में प्रयुक्त होने वाली लिपि का प्रभाव एवं भीली के लिए अलग से किसी लिपि का न होना है। वागड़ी भाषा को लिपिबद्ध करने के संदर्भ में निम्न विकल्पों पर विचार किया जाना उचित होगा-

1. भीली के लिए नई लिपि बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए।
2. एक से अधिक लिपियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
3. वागड़ी (भीली) भाषा की ध्वनि-व्यवस्था के अनुरूप देवनागरी में संशोधन करके देवनागरी लिपि को अपनाया जाना चाहिए।

“भीली गीत एवं लोकोक्तियाँ” की लेखिका श्रीमती मंगला गरवाल अपनी किताब को देवनागरी लिपि में लिखने के बावजूद भीली के लिए अलग से नई लिपि बनाने की पक्षधर हैं। लेखिका मध्यप्रदेश से हैं तथा

लिपि के प्रति उनका यह पक्ष उनकी भीली भाषा की किताब को देवनागरी लिपि में लिखते समय आई समस्याओं पर आधारित है। श्रीमती मंगला गरवाल के अनुसार भीली में किताब लिखते समय "ऐसा प्रतीत हुआ कि देवनागरी लिपि को भीली लिखने के लिए उधार ले रहे हैं।" उनके अनुसार भीली भाषा के लिए एक नई लिपि की आवश्यकता भाषाई अस्मिता को बचाए रखने के लिए भी आवश्यक है। उनके विचारों का सम्मान किया जाना चाहिए, क्योंकि वह उस समुदाय की सम्मानित एवं पढ़े-लिखे सदस्यों में से एक हैं और हो सकता है कि उनका व्यक्तिगत विचार उस समुदाय के लोगों के विचारों का प्रतिनिधित्व करता हो। गोंडी एवं कुरुख जैसे जनजातीय समूहों ने भी अपनी भाषा को लिपिबद्ध करने के लिए जिस प्रकार से नई लिपि का प्रयोग किया है वह महत्त्वपूर्ण है तथा लेखिका के इन विचारों को समर्थन देता है।

लेकिन प्रश्न यह है कि नई लिपि बनाना इतना आसान है? वैसे भी किसी नई लिपि को बनने में हज़ारों साल लग जाते हैं। हमारी मौजूदा लिपियाँ भाषाविज्ञान, रेखागणित, दर्शनशास्त्र आदि विषयों के विद्वानों के कठिन परिश्रम और खोज का परिणाम हैं। यद्यपि, इसमें कोई शक नहीं कि ये लिपियाँ अत्यंत वैज्ञानिक हैं परन्तु विकास की इस ऊँचाई पर भी उनका परिवर्धन एवं परिमार्जन युग कि आवश्यकताओं के आधार पर होता रहता है। कुछ लोगों का यह कहना कि भीली भाषा को देवनागरी या गुजराती लिपि में नहीं लिखा जा सकता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से क्या उचित होगा? दूसरी बात , एक नई लिपि का बोझ बढ़ाना क्या भीली बच्चों के भविष्य के लिए उचित होगा? भाषा को लिपिबद्ध करने का प्रश्न भावना के आधार पर नहीं बल्कि वैज्ञानिकता के आधार पर देखा जाना चाहिए। आवश्यकता इस बात है कि जो भी लिपि चुनी जाए वह भाषा की ध्वनि-व्यवस्था के साथ पूरी तरह न्याय कर पाए और भाषा के उच्चारण में एवं उच्चारित को लिखने में बाधक न हो। एक आदर्श लिपि वही होती है जिसमें जो बोला (उच्चारण) जाय वही लिखा जाय एवं जो लिखा जाय वही उच्चारण किया जाय।

कुछ विद्वान भीली भाषा के लिए एक से अधिक लिपि के अपनाये जाने के पक्ष में भी हैं क्योंकि भीली का क्षेत्र बहुत बड़ा है। महिपाल भूरिया, जो भीली भाषा में सामुदायिक रेडियो चलाते हैं; भीली भाषा के लिए देवनागरी, गुजराती (गुजरात में) तथा रोमन लिपि (कंप्यूटर में प्रयोग के लिए) को अपनाए जाने पर बल देते हैं। लेकिन जब तक भाषा विशेष के लिए, जिसको शिक्षा में माध्यम के रूप में अपनाया जाना हो, कोई

लिपि विशेष सुनिश्चित न करने पर भाषा में एकरूपता लाने एवं उसके मानकीकरण में बाधा आएगी। लेकिन भीली समुदाय के अधिकतर विद्वानों का यही मानना है की गुजरात में गुजराती लिपि तथा अन्य प्रदेशों में देवनागरी लिपि को अपनाया जाना चाहिए। भीली भाषा बोलने वाले मुख्य रूप से जिन चार राज्यों में रहते हैं वहाँ की प्रमुख भाषाएँ क्रमशः हिंदी (मध्य-प्रदेश व राजस्थान में), मराठी (महाराष्ट्र में) तथा गुजराती (गुजरात में) हैं।

भीली भाषा में उपलब्ध ध्वनियों के अनुरूप देवनागरी लिपि का परिवर्धन एवं परिमार्जन करके देवनागरी लिपि को भी/ही अपनाए जाने के विचार से अधिकतर भाषाविद सहमत हैं। किसी भी भाषा की लिपि को उस भाषा में मौजूद ध्वनियों के अनुरूप रखने से उस लिपि कि स्वीकार्यता बढ़ती है तथा प्रयोग करने में भी सुविधा होती है। जितनी आवश्यकता हो, लिपि में उतना ही परिवर्तन होना चाहिए। लिपि के अत्यधिक परिवर्तन से भाषा में क्लिष्टता आयेगी जिससे भाषा आमलोगों से दूर होती जाएगी। भाषा को 'लिपिबद्ध' करने के बजाय भाषा को 'लिपिबंद' यानि की लिपि में बन्द करने का प्रयास नहीं किया जाना चाहिए। बेहतर यही होगा कि भीली भाषा की ध्वनि-व्यवस्था के आधार पर भाषाई विविधता का अध्ययन किया जाए और मौजूद ध्वनियों को देवनागरी लिपि में विशेषक चिह्नों (यूनिकोड में सुझाए गए) की सहायता से लिखा जाए, तो भाषा में एकरूपता भी बनी रहेगी एवं हिंदी के मानकीकरण एवं आधुनिकीकरण के साथ-साथ भीली का भी परिमार्जन एवं परिवर्धन होता रहेगा। इसका सटीक उदाहरण संथाली भाषा है जिसने नई लिपि को बनाने की समस्या में न उलझते हुए देवनागरी लिपि को ही अपनाया है। जहाँ तक कम्प्यूटर में भाषिक अनुप्रयोग की बात है, बहुत सारे संस्थान देवनागरी लिपि का कम्प्यूटर में उपयोग करने के लिए शोध कर रहे हैं, और बहुत सारे कार्य इस क्षेत्र में हो भी चुके हैं। देवनागरी का यूनिकोड फ़ॉन्ट विकसित किया जा चुका है अतः इस लिपि को अपनाने से भीली के लिए कम्प्यूटर में भाषिक अनुप्रयोग की समस्या का समाधान भी स्वतः ही हो जाएगा।

भीली भाषा के मानकीकरण के लिए सर्वप्रथम भाषा के अधिकाधिक प्रयोग पर बल दिया जाना चाहिए। मानकीकरण का प्रश्न तब उठता है, जब भाषा के विविध रूप प्रचलित हों। जब तक भाषा में प्रयोग होने वाले विभिन्न शब्दों का स्वरूप सामने नही आयेगा, तब तक उनके अध्ययन का प्रश्न ही नहीं उठता। भाषा

के प्रयोग को बढ़ावा देना चाहिए तत्पश्चात सभी विविधताओं (variations) चाहे वह भाषा के किसी भी स्तर पर हो, को देखते हुए, भाषाविदों की राय लेते हुए, वैज्ञानिकता की कसौटी पर कसते हुए, और भाषा बोलने वालों की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए ही भीली-भाषा का मानकीकरण किया जाना चाहिए।

भीली के साथ-साथ भीली की बोली वागड़ी में भी भाषाई विविधता मौजूद है, जैसे खेरवाड़ा, बाँसवाड़ा तथा विछीवाड़ा में बोली जाने वाली वागड़ी में अंतर है। अतः सर्वप्रथम भाषा में मौजूद विविधता का अध्ययन किया जाए तथा यह विविधता भाषा के किस स्तर की है, इसका निरूपण किया जाए। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाने वाली भीली का प्रलेखन (डाक्युमेंटेशन) किया जाए। भाषाई विविधता को आमजन इसके मानकीकरण की राह में रोड़ा मानते हैं लेकिन भाषाविद भाषाई विविधता को भाषा की पूँजी मानते हैं। हिंदी के संदर्भ में प्रख्यात भाषाविद प्रोफेसर राजेश सचदेव का मानना है कि "हिंदी की बोलियाँ ही उसकी पूँजी हैं"। और पूँजी ही तो समृद्धि है। इसके अलावा यह भी नहीं भूलना चाहिए कि भाषाई विविधता तो भाषा का स्वाभाविक गुण है। आवश्यकता इस बात की है कि भीली के शब्दों का संकलन किया जाए तथा उनका तुलनात्मक एवं व्यतिरेकी विश्लेषण किया जाए। भीली के विकास के लिए भीली के साथ-साथ भीली की बोलियों का भी शब्दकोश बनाए जाने की महती आवश्यकता है। इस संदर्भ में यह बताना सामयिक होगा कि भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर में श्री जी डी पी शास्त्री के नेतृत्व एवं प्रोफेसर जगदीश शर्मा जी के निर्देशन में भीली एवं उसकी बोलियों का एक शब्दकोश (लगभग दस हजार शब्दों का) बनाने कि एक महत्त्वाकांक्षी परियोजना चल रही है जिसमें लेखक ने लगभग एक वर्ष से ज्यादा समय तक कार्य किया है और वर्तमान में शर्मीष्ठा चक्रबर्ती परियोजना से संबद्ध हैं।

भाषाई विविधता सिर्फ भीली में ही नहीं, अपितु सभी भाषाओं में मौजूद है। भारत की जनगणना 2001 के अनुसार हिंदी के अंतर्गत कुल 49 बोलियों को वर्गीकृत किया गया है। विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाने वाली हिंदी की विविधता से हम सभी परिचित हैं। यह विविधता जो शब्दों के रूप में मौजूद है, हिंदी भाषा की पूँजी है और बोलियों से शब्द ग्रहण करके हिंदी अपने को समृद्ध बनाती जा रही है। बोलियाँ भी कभी-कभी अपने को इतना समृद्ध और सशक्त बना लेती हैं कि अपने को एक परिपूर्ण भाषा के रूप में प्रतिष्ठित कर

लेती हैं, जैसे मैथिली ने किया। मैथिली, जो 2004 से पहले हिंदी की बोली रूप में जानी जाती थी, अब संविधान की आठवीं सूची में शामिल कर ली गई है।

राजस्थान में भीली की बोली वागड़ी को स्कूलों से जोड़ने के संदर्भ में पहली और मुख्य बात इस भाषा को औपचारिक रूप से प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर शामिल किए जाने से है। मातृभाषा के माध्यम से बालकों को शिक्षा देना काफी सरल और आसान होता है क्योंकि बच्चे मातृभाषा को पूर्णरूपेण जानता है और समझता है। मातृभाषा के माध्यम से दी गयी शिक्षा प्रभावकारी एवं स्थायी होती है।शिक्षक जितने सरल एवं प्रभावशाली ढंग से विचारों को बालकों के सामने रखेगा, बच्चे उतनी ही सरलता एवं रुचि से उसको ग्रहण करेंगे।अपरिपक्व मष्तिष्क वाले छात्र द्वितीय भाषा में अधूरा ज्ञान रखने के कारण उसके माध्यम से किसी भी विषय को स्पष्ट ढंग से समझने एवं आत्मसात करने में असहज महसूस करते हैं। मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने का उदेश्य मात्र बच्चों को सफल डॉक्टर या इंजीनियर बनाने से ही नहीं है, अपितु मातृभाषा उस समुदाय के संस्कृति की वाहक भी होती है अतः मातृभाषा का ज्ञान उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक अस्मिता एवं वैशिष्ट्य को समझने एवं उनमें सामंजस्य बैठने में भी सहयोग करती है।

मनोविज्ञान ने तो यह सिद्ध कर दिया है कि मानसिक एवं बौद्धिक विकास का आधार विचार शक्ति है। विचारों के द्वारा ही बुद्धि को निश्चित दिशा एवं गति प्राप्त होती है। इसप्रकार मनोविज्ञान ने विचारों एवं भाषा के बीच घनिष्ठ संबंध को स्थापित किया है। विचारों के गर्भ से भाषा का जन्म होता है तथा भाषा मे लिपटकर ही विचार प्रकट होते हैं। मातृभाषा का संबंध व्यक्ति के जन्म से ही होता है, अतः उसके विचार समान्यतः मातृभाषा में ही उद्भूत होते हैं। जिसकी भाषा जितनी सशक्त होगी उसके विचार उतने ही सुदृढ़ एवं प्रखर होंगे। निष्कर्ष रूप में यह कहना है कि मातृभाषा के माध्यम से ज्ञान-विज्ञान-साहित्य इत्यादि विषयों में शिक्षा का प्राविधान होने से बच्चों का मानसिक एवं बौद्धिक विकास अपेक्षाकृत द्रुत गति से होता है।

वैसे तो वागड़ क्षेत्र के शिक्षक स्कूलों में सभी विषयों को पढ़ाते समय अनौपचारिक रूप से वागड़ी का ही प्रयोग करते हैं, लेकिन यदि वागड़ी को औपचारिक रूप से स्कूलों में स्थान दिया जाना हो तो उसके लिए क्या नीति अपनाई जानी चाहिए। किस स्तर के बच्चों के लिए पाठ्यपुस्तकें बनाई जाएँ? इन पाठ्यपुस्तकों

का स्वरूप क्या होना चाहिए? जहाँ तक छात्रों के लिए पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की बात है, अधिकांश विद्वान प्रारंभिक दौर में अभी प्राथमिक स्तर के विद्यालयों तक के लिए ही इस भाषा के द्वारा शिक्षण की व्यवस्था किए जाने के पक्ष में हैं। बच्चे अपनी मातृभाषा के माध्यम से पढ़ना-लिखना सीखें या दूसरे शब्दों में अक्षर ज्ञान अर्जित करें। वर्तमान समय में भाषावैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों का एक बहुत बड़ा धड़ा कम से कम प्राथमिक स्तर तक शिक्षा को मातृभाषा के माध्यम से देने के पक्ष में हैं। इसके समर्थन में उपर के दो पैराग्राफों में काफी कुछ लिखा गया है लेकिन वहीं कुछ भाषा-वैज्ञानिक एवं भाषा-नियोजन के विद्वान प्राथमिक स्तर तक मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने के बाद ऊपर की कक्षाओं में बच्चों के छंट जाने (drop out or push out) की समस्या का एक बड़ा कारण प्राथमिक स्तर की शिक्षा के बाद के स्तरों में मातृभाषा का शिक्षा के माध्यम के रूप में उपलब्ध न होना मानते हैं। प्रो. गणेश देवी, जो की गुजरात एवं राजस्थान में जनजातीय समूहों एवं उनकी भाषाओं के विकास में सहयोग के लिए जाने जाते हैं, भी जनजातीय क्षेत्रों में छात्रों द्वारा प्राथमिक स्तर की शिक्षा के बाद विद्यालय छोड़ने का मुख्य कारण भाषा ही मानते हैं।

दूसरा प्रश्न यह आता है कि मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा ग्रहण कर रहे बच्चों को हिंदी या क्षेत्र विशेष की प्रमुख भाषा, जो सैद्धांतिक रूप से उन बच्चों के लिए द्वीतिय भाषा होगी, से कब और कैसे परिचित करवाया जाए। यह ध्यान देने की बात है कि वागड़ी माध्यम से प्राथमिक शिक्षा अर्जित करने के बाद आगे की कक्षाओं में बच्चों को मुख्य भाषा सीखने में भी समस्या नहीं आनी चाहिए। नहीं तो एक ओर बच्चों के स्कूल छोड़ने की संभावना बढ़ सकती है तो दूसरी ओर उनमें हीन भावना का भी विकास हो सकता है।

इस संबंध में एक सुझाव यह हो सकता है कि बच्चों को मातृभाषा एवं अन्य भाषा (हिंदी या राज्य विशेष की राजभाषा) दोनों को ही प्राथमिक स्तर से पढ़ाया जाय जिससे इन बच्चों को आगे की कक्षाओं में भाषाई परेशानी का सामना न करना पड़े और शायद छंट जाने (push out) की दर भी पहले से कम हो जाय। लेकिन यह बात भी इतनी आसान नही है, कारण विभिन्न भाषाओं की क्षेत्र विशेष में उपस्थिति। जैसे राजस्थान में स्कूली छात्र वागड़ी + राजस्थानी पढ़े, वागड़ी + हिंदी या वागड़ी + राजस्थानी + हिंदी पढ़े। भीली समाज के कुछ पढ़े-लिखे लोग भीली बच्चों के चहुँमुखी विकास के लिए इन भाषाओं के ज्ञान के

साथ-साथ अँग्रेजी भाषा की भी जानकारी देना अपरिहार्य मानते है। लेकिन इससे क्या एक जनजातीय परिवेश का बच्चा भाषाओं के मकड़जाल में उलझ नही जाएगा? क्या दो या दो से अधिक भाषाओं के भार से बच्चा किसी भी भाषा में अपनी पकड़ मजबूत कर पाएगा?

यदि मातृभाषा वागड़ी में ही बच्चों को प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा दी जाए तो उनके पाठ्यक्रम कैसे हों तथा पाठ्यपुस्तकों का स्वरूप कैसा हो? भीली भाषा कुल सत्रह बोलियों का एक समूह हैं (census 2001) जिसमें बोलियों के अन्दर भी क्षेत्रीय भाषाई विविधताएँ मौज़ूद हैं। इससे बागड़ी भी अछूती नही है। वागड़ी में भी पर्याप्त क्षेत्रीय भाषिक विभिन्नताएँ हैं जैसे खेरवाड़ा, बाँसवाड़ा तथा विछीवाड़ा में बोली जाने वाली वागड़ी में अंतर है। इस विभिन्नता को स्कूली पाठ्यक्रम में कैसे निरूपित करें? भाषा की विभिन्नता को निरूपित करने के लिए कई सुझाव हो सकते हैं जिसमें सबसे सरल सुझाव अलग-अलग जगह की बोली के लिए अलग-अलग पाठ्यपुस्तक बनाना लेकिन पाठों का क्रम समान रखना। दूसरा सुझाव यह हो सकता है कि एक शब्द के लिए विभिन्न बोलियों में प्रयुक्त शब्दों का प्रयोग एक ही पाठ्यपुस्तक में अंक देकर उनके प्रयोग के क्षेत्र विशेष को बताना।

भीली भाषा को स्कूली शिक्षा से जोड़ना इस समुदाय के विकास में मील का पत्थर साबित होगा, जिसके लिए इस समुदाय को सतत प्रयास करने की अवश्यकता है। भाषा को विद्यालय से जोड़ने के लिए बच्चों में रुचि पैदा करनी होगी। अतः पाठ्यक्रम का निर्धारण भी एक महत्त्वपूर्ण एवं जिम्मेदारी का कार्य होगा। पाठ्यक्रम को रुचिकर बनाने के लिए बच्चों की रुचियों एवं परिवेश को ध्यान में रखना अनिवार्य होगा। विद्यालय में भी घरेलू भाषा के व्यवहार को प्राथमिकता दी जानी चाहिए और इसको प्राथमिक स्तर से ही क्षेत्रीय भाषा को मंच पर बोलने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि जितना वयस्क लोग भाषा के प्रति मान-सम्मान की भावना रखते हैं बच्चे इन भावनाओं से उतने ज्यादा प्रभावित नहीं होते। क्षेत्र के महापुरुषों की जीवनी को पाठ्यक्रम में शामिल करने से बच्चों में उमंग एवं जोश का संचार होगा तथा साथ ही साथ अपनी संस्कृति से जुड़ाव। बाल साहित्य का विकास वागड़ी के आधार पर हो लेकिन बच्चों को संपर्क भाषा के माध्यम से ही समाज से जोड़ना उचित होगा जिससे बच्चों को आगे की शिक्षा में भाषा की समस्या से दो-चार न होना पड़े। जनजातीय क्षेत्र में स्कूली शिक्षकों को विशेष रूप से

प्रशिक्षण देने की आवश्यकता होगी और उनसे सलाह लेकर ही पाठ्यपुस्तकें तैयार कारवाई जानी चाहिए। पढ़ाई के साथ खेल को जोड़कर भी बच्चों में रुचि पैदा की जा सकती है।

तेजी से बदलते आधुनिक परिवेश में जनजातीय क्षेत्रों का शहरीकरण हो रहा है। कमोवेश क्षेत्रीय बोलियाँ धीरे-धीरे कमज़ोर पड़ती जा रही हैं। पढ़े-लिखे आदिवासी भी भीली बोली में बात करते हुए झिझकते हैं। ऐसे में स्कूल के बाहर समुदाय को वागड़ी भाषा से जोड़ना नितान्त आवश्यक है। समुदाय से जुड़ने के लिए समुदाय में जाकर लोगों के बीच खेती बाड़ी की जानकारी, स्वास्थ्य की जानकारी, सरकारी योजनाओं की जानकारी, सामान्य जानकारी इत्यादि वागड़ी भाषा में दी जानी चाहिए। क्षेत्रीय आकाशवाणी एवं दूरदर्शन पर कुछ देर के लिए ही सही, वागड़ी भाषा में कार्यक्रम प्रसारित किए जाने चाहिए जिससे वागड़ी बोलने वालों के बीच आत्मविश्वास का संचार हो। रेडियो पर जन समस्याओं, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक इत्यादि समस्याओं पर वागड़ी भाषा में वार्तालाप प्रसारित करवाने की भी आवश्यकता है।

इस सन्दर्भ में महिपाल भूरिया जी के द्वारा भीली-भाषा में सामुदायिक रेडियो का प्रसारण इनके समाज को अपनी भाषा से जोड़ने के संबंध में एक महत्त्वपूर्ण कार्य था। भीली बोली को बचाने के उद्देश्य से भीली बोली में पहली बार तुलसीकृत रामचरित मानस का भावार्थ मध्यप्रदेश के बाग (धार) में रहने वाले और ईसुरी अलंकरण से सम्मानित भानुशंकर गेहलोत द्वारा किया गया है। इसी वर्ष इसका प्रकाशन मध्य प्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् के द्वारा किया जाएगा। ऐसे में अनपढ़ ग्रामीणों को यह अनुवादित ग्रंथ पढ़कर सुनाना काफी उपयोगी साबित होगा। भीली में रचित ग्रंथ में दोहा, चौपाई, सोरठा, छंद वगैरह वही हैं, केवल हिंदी भावार्थ के स्थान पर भीली भाषा का उपयोग किया गया है। इसे तैयार करने में दो से तीन वर्ष का समय लगा और भावार्थ के लिए प्रयोग किये गए शब्दों में लगभग ६६ प्रतिशत शब्द भीली के हैं। लेखक के अनुसार इसमें कुछ हि ऐसे शब्द प्रयोग किये गए हैं जो भीली के नहीं हैं।

प्रो. गणेश देवी भीली के साथ ही अन्य गैर-अनुसूचित जनजातीय भाषाओं की दुर्दशा को इतिहास से जोड़कर देखते हैं। उनके अनुसार इनके विकसित ना होने के कारण इतिहास में छुपे हैं। उनके अनुसार कोलकाता में सेंट फोर्ट विलियम कॉलेज में जब छापाखाना लगा तो उसका प्रयोग अँग्रेज अधिकारियों की

सुविधा के लिए सिर्फ उन भारतीय भाषाओं में मुद्रण के कार्य के लिए किया गया जिन भाषाई क्षेत्रों में उनके प्रमुख कार्यालय थे। मुद्रण का कार्य अधिकारियों को प्रशासनिक कार्यों में मदद के लिए प्रारंभ किया गया था। स्वतंत्रता के बाद इन्हीं भाषाओं के नाम या इन्हीं भाषाओं के क्षेत्र के आधार पर अधिकतर राज्यों का निर्माण किया गया। जिन भाषाओं में मुद्रण का कार्य नही हो सका उनके नाम पर राज्यों का निर्माण नही हुआ और उन भाषाओं को बोलने वाले एक से अधिक राज्यों के सीमावर्ती क्षेत्रों में बँट गए। भीली भी इनमें से एक है क्योंकि इसके बोलने वाले भी चार राज्यों के सीमावर्ती क्षेत्रों में बंट गए। इस प्रक्रिया का उनकी भाषाओं पर प्रतिकूल असर पड़ा। प्रो. गणेश देवी के अनुसार स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में भी सिर्फ वही भाषाएँ स्थान प्राप्त कर सकीं जिन भाषाओं में अँग्रेजों ने मुद्रण का कार्य प्रारंभ किया था। जो भाषाएँ संविधान की आठवीं अनुसूची में नही हैं उनके विकास के लिए सरकार आर्थिक मदद नहीं के बराबर देती है, सरकार उन भाषाओं के लिए विश्वविद्यालय नही खोलगी, अलग विषय के रूप में विश्वविद्यालय स्तर पर विभाग नही खुलेगा इत्यादि- इत्यादि, परिणामस्वरुप ये भाषाएँ गुणात्मक रुप से विकसित नहीं हो पायेंगी, बोलने से हीनभावना का विकास होगा, व्यवसाय (रोजी-रोटी) का माध्यम नहीं बनेंगी इत्यादि। दूसरे शब्दों में ये भाषाऐं मृतप्राय होने के दुष्चक्र में फँस जायेंगी।

लेकिन क्या यह बात सत्य नहीं कि डोगरी, बोडो, मैथिली, सिंधी, संथाली इत्यादि भाषाओं के छापेखाने तो अँग्रेजों के समय नहीं खुले थे और न ही उनके नाम पर राज्य ही बने थे फिर भी उन्हें संविधान की आठवीं अनुसूची में क्या शामिल नहीं किया गया ? जिन भाषाओं में अँग्रेजों ने मुद्रण का कार्य नहीं किया था उन भाषाओं को भी तो स्वतंत्रता के पश्चात संविधान की आठवीं अनुसूची में धीरे-धीरे शामिल किया गया। वास्तव में, भारतीय भाषाओं को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने कि प्रक्रिया एक सतत एवं विकासशील प्रक्रिया है और इस क्रम में विभिन्न भाषाओं का संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल होने का क्रम आगे भी जारी रहेगा। इसी क्रम में यह भी बताना सामयिक होगा कि भोटी भाषा समुदाय तथा भोजपुरी भाषा समुदाय अपनी-अपनी भाषाओं को संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान दिलाने के लिए प्रयासरत हैं। भाषा की पहचान स्थापित करना हो या उसे शिक्षा का माध्यम बनाना हो या उसमें साहित्य

सृजन करना हो या अंततः उसे भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करना ही क्यों ना हो, इसमे दो मत नहीं कि अंततः इन सब के लिए प्रयास तो समुदाय विशेष को ही करना होगा।

अतः भाषाई नेतृत्व विकसित करने के लिए सर्वप्रथम कार्य वागड़ी बोलने के प्रति हीन भावना को दूर करना होगा। वागड़ी भीली भाषा की एक समृद्ध बोली है जिसमें साहित्य सृजन का भी श्री गणेश हो चुका है लेकिन मंच से जब वागड़ी में लिखित रचना के बारे में भी बोलना होता है तो लोग वागड़ी में नहीं बोलना चाहते। मंच से वागड़ी बोलने में पढ़े-लिखे लोग भी झिझकते हैं अतः सर्वप्रथम भील भाइयों को अपनी इस झिझक को दूर करना होगा। यह झिझक उनमें आत्मविश्वास कि कमी दर्शाती है अतः दूसरों के सहयोग के बिना ही अपना आत्मविश्वास सुदृढ़ करना होगा। मातृभाषा की तुलना हमें माँ से करनी चाहिए जो न अच्छी होती है न बुरी होती है, माँ तो सिर्फ माँ होती है। भारतेन्दु जी ने भी निजभाषा (मातृभाषा) को सभी उन्नतियों के मूल में माना है –

निजभाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निजभाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को सूल।।

जब हम निजभाषा (मातृभाषा) की सार्थकता को समझ लेंगे, मंच से बोलना शुरु कर देंगे, साहित्य सृजन करना शुरु कर देंगे, तो बाकी सभी भाषागत समस्याओं जैसे लिपिबद्धता, मानकीकरण, भाषा की विद्यालयों में उपादेयता, भाषाई नेतृत्व का विकास, बोलने में हीनता का बोध इत्यादि समस्याओं का समाधान भाषा प्रयोग से स्वतः ही होना प्रारंभ हो जाएगा। दूसरे शब्दों में वागड़ी में बोलना, वागड़ी में लिखना एवं वागड़ी के शब्दों का संग्रहण करना अभी से ही प्रारंभ करना होगा और भाषा के विकास और प्रयोग की जिम्मेदारी भाषिक समुदाय को ही प्राथमिक रूप से निभानी पड़ेगी।

"Use it or lose it".

Citation: सिंह, परमान (2015). भील जनजाति के लिए भाषा-शिक्षण की रूपरेखा, HindiTech: A Blind Double Peer Reviewed Bilingual Web-Research Journal, 6 (6), 69-81. URL: https://hinditech.in/bhil-janajati-ke-liye-bhasha-shikshan-ki-ruprekha/